International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly

ISSN – 2347-7075
Impact Factor – 0.899
Vol.2 No.6 July – Aug. 2015

# प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकार: एक ऐतिहासिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक परिप्रेक्ष्य

**डॉ. रवीन्द्र कुमार सिंह**

*पी.जी.टी. (इतिहास),*

*आर. एन. सीनियर सेकेंडरी स्कूल, जाखिम, औरंगाबाद (बिहार)*

***सारांश:***

*प्राचीन भारतीय सभ्यता विश्व की सबसे समृद्ध, प्राचीन और विकसित सभ्यताओं में से एक रही है। भारतीय समाज में अलंकारों का विशेष महत्व था, जो केवल सौंदर्य-वर्धन तक सीमित नहीं था, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा, धार्मिक आस्था, आर्थिक सम्पन्नता तथा सांस्कृतिक पहचान का भी प्रतीक था। प्राचीन काल में स्त्री एवं पुरुष दोनों विभिन्न प्रकार के आभूषणों का उपयोग करते थे। वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों, पुराणों तथा पुरातात्त्विक साक्ष्यों से ज्ञात होता है कि भारतीय समाज में अलंकरण की परंपरा अत्यंत विकसित और समृद्ध थी। स्वर्ण, रजत, कांस्य, मोती, रत्न तथा बहुमूल्य धातुओं से निर्मित आभूषण तत्कालीन समाज की कलात्मक उत्कृष्टता और आर्थिक उन्नति को प्रदर्शित करते थे।[1]*

*प्राचीन भारत में अलंकार केवल व्यक्तिगत श्रृंगार की वस्तुएँ नहीं थे, बल्कि वे व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, पारिवारिक प्रतिष्ठा, धार्मिक विश्वास तथा सांस्कृतिक मूल्यों के भी प्रतीक थे। विभिन्न कालखंडों में अलंकारों के स्वरूप, निर्माण तकनीक तथा उपयोग में परिवर्तन देखने को मिलता है, जो तत्कालीन समाज के सामाजिक एवं आर्थिक विकास को प्रतिबिंबित करता है। सिंधु घाटी सभ्यता से प्राप्त मनकों, कंगनों तथा धातु-निर्मित आभूषणों से लेकर गुप्तकालीन रत्नजड़ित आभूषणों तक भारतीय शिल्पकला की निरंतर प्रगति स्पष्ट दिखाई देती है।*

*प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का प्रयोग केवल राजपरिवारों या उच्च वर्गों तक सीमित नहीं था, बल्कि सामान्य जनजीवन में भी इनका व्यापक उपयोग होता था। विवाह, यज्ञ, धार्मिक अनुष्ठान, पर्व-त्योहार तथा सामाजिक समारोहों में विभिन्न प्रकार के आभूषणों का विशेष महत्व था। महिलाओं के लिए अलंकार सौभाग्य, सम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रतीक थे, जबकि पुरुषों के लिए वे शक्ति, वीरता और अधिकार के सूचक माने जाते थे। प्रस्तुत शोध आलेख में प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित विभिन्न अलंकारों की परंपरा, उनके ऐतिहासिक विकास, सांस्कृतिक महत्व तथा सामाजिक उपयोगिता का विस्तृत अध्ययन किया गया है।*

***प्रमुख शब्द : प्राचीन भारत, अलंकार, आभूषण, संस्कृति, सामाजिक जीवन, कला, श्रृंगार, भारतीय सभ्यता।***

**प्रस्तावना:**

मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ सौंदर्यबोध और अलंकरण की भावना का भी विकास हुआ। प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का इतिहास अत्यंत प्राचीन, समृद्ध और गौरवपूर्ण रहा है। भारतीय संस्कृति में अलंकार केवल श्रृंगार का साधन नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक जीवन, धार्मिक आस्था, आर्थिक सम्पन्नता तथा सांस्कृतिक मूल्यों से गहराई से जुड़े हुए थे। यही कारण है कि भारतीय इतिहास के लगभग प्रत्येक कालखंड में अलंकारों और आभूषणों का विशेष महत्व दिखाई देता है।

सिंधु घाटी सभ्यता से प्राप्त पुरातात्त्विक अवशेष इस तथ्य की पुष्टि करते हैं कि लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व भी भारतीय समाज में विभिन्न प्रकार के आभूषणों का प्रयोग किया जाता था। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से प्राप्त मनके, कंगन, हार, कुंडल तथा अन्य अलंकार उस युग की विकसित शिल्पकला और सौंदर्यप्रियता के प्रमाण हैं। उत्खननों से प्राप्त स्वर्ण, ताम्र, कांस्य तथा अर्द्ध-बहुमूल्य पत्थरों से निर्मित आभूषण यह दर्शाते हैं कि उस समय के शिल्पकार आभूषण निर्माण की उन्नत तकनीकों से परिचित थे।

वैदिक काल में अलंकारों का महत्व और अधिक बढ़ गया। ऋग्वेद, अथर्ववेद तथा ब्राह्मण ग्रंथों में स्वर्णाभूषणों, हारों, कुंडलों तथा अन्य श्रृंगारिक वस्तुओं का उल्लेख मिलता है। वैदिक समाज में स्वर्ण को समृद्धि और वैभव का प्रतीक माना जाता था तथा स्वर्ण निर्मित आभूषणों का विशेष महत्व था। स्त्रियाँ ही नहीं, बल्कि पुरुष भी विभिन्न प्रकार के आभूषण धारण करते थे। धार्मिक अनुष्ठानों और यज्ञों के अवसर पर विशेष प्रकार के अलंकारों का उपयोग किया जाता था।

महाकाव्य काल में अलंकारों की परंपरा और अधिक विकसित हुई। रामायण में सीता, कौशल्या तथा अन्य राजमहिलाओं के आभूषणों का विस्तृत वर्णन मिलता है। महाभारत में द्रौपदी, कुंती तथा अन्य पात्रों द्वारा धारण किए गए बहुमूल्य आभूषणों का उल्लेख तत्कालीन समाज की सम्पन्नता और अलंकरण संस्कृति का परिचायक है। इसी प्रकार विभिन्न पुराणों तथा संस्कृत साहित्य में देवताओं, राजाओं और अभिजात वर्ग के लोगों के अलंकारों का विस्तृत वर्णन मिलता है।

मौर्य, शुंग, कुषाण और गुप्त काल में भारतीय आभूषण कला ने उल्लेखनीय उन्नति की। इस काल में स्वर्णकारों और शिल्पियों ने आभूषण निर्माण की अत्यंत विकसित तकनीकों का विकास किया। विभिन्न प्रकार के रत्नजड़ित आभूषणों का निर्माण हुआ, जिनकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैली हुई थी। गुप्तकालीन मूर्तियों, अजंता के भित्तिचित्रों तथा अन्य कलात्मक अवशेषों में अंकित आभूषण भारतीय कला और शिल्पकौशल की उच्चतम उपलब्धियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का महत्व केवल सौंदर्य-वर्धन तक सीमित नहीं था। वे सामाजिक प्रतिष्ठा, वैवाहिक स्थिति, धार्मिक आस्था तथा आर्थिक स्थिति के महत्वपूर्ण संकेतक थे। विभिन्न प्रकार के आभूषण व्यक्ति के सामाजिक स्तर और सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को भी व्यक्त करते थे। यही कारण है कि प्राचीन

भारतीय समाज में अलंकारों को केवल विलासिता की वस्तु नहीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न अंग माना जाता था। इस दृष्टि से प्राचीन भारतीय अलंकारों का अध्ययन तत्कालीन समाज की संस्कृति, कला, अर्थव्यवस्था और सामाजिक संरचना को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

**प्राचीन भारतीय समाज में प्रचलित प्रमुख अलंकार:**

**कर्णाभूषण (कुंडल):** कर्णाभूषण अथवा कुंडल प्राचीन भारतीय समाज के सर्वाधिक लोकप्रिय और प्राचीन आभूषणों में से एक थे। स्त्री एवं पुरुष दोनों ही कानों में कुंडल धारण करते थे। वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत तथा विभिन्न पुराणों में कुंडलों का उल्लेख प्राप्त होता है। स्वर्ण, रजत, ताम्र, कांस्य, हाथीदांत, मोती तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित कुंडल विशेष रूप से प्रचलित थे। राजाओं, राजकुमारों तथा अभिजात वर्ग द्वारा रत्नजड़ित कुंडल धारण किए जाते थे, जबकि सामान्य लोग धातुओं अथवा अन्य स्थानीय सामग्रियों से निर्मित कर्णाभूषणों का उपयोग करते थे। कुंडल केवल सौंदर्य-वर्धन का साधन नहीं थे, बल्कि वे सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक सम्पन्नता तथा सांस्कृतिक पहचान के भी प्रतीक माने जाते थे। अनेक देवी-देवताओं की मूर्तियों में भव्य कुंडलों का चित्रण मिलता है, जिससे इनके धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व का भी पता चलता है।[2]

**हार एवं माला:** हार एवं मालाएँ प्राचीन भारतीय श्रृंगार परंपरा के अत्यंत महत्वपूर्ण अंग थे। गले में धारण किए जाने वाले ये आभूषण केवल सौंदर्य को बढ़ाने के लिए ही नहीं, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक सम्पन्नता तथा धार्मिक आस्था को व्यक्त करने के लिए भी उपयोग किए जाते थे। वैदिक साहित्य में 'निष्क', 'हिरण्यहार' तथा अन्य स्वर्णाभूषणों का उल्लेख मिलता है, जो तत्कालीन समाज में हारों के महत्व को दर्शाता है।

प्राचीन भारत में हार विभिन्न प्रकार के होते थे। स्वर्ण, रजत, मोती, मणि, रत्न तथा बहुमूल्य पत्थरों से निर्मित हार विशेष रूप से राजपरिवारों और अभिजात वर्ग में लोकप्रिय थे। धार्मिक अवसरों पर पुष्पमालाओं का प्रयोग भी व्यापक रूप से किया जाता था। देव-प्रतिमाओं को भी विभिन्न प्रकार की मालाओं से अलंकृत किया जाता था, जिससे उनके प्रति श्रद्धा और भक्ति व्यक्त की जाती थी।

अजंता, एलोरा, सांची तथा अमरावती की मूर्तियों और चित्रों में विविध प्रकार के हारों का उत्कृष्ट चित्रण मिलता है। महिलाओं के बहुपरत हार, मोतियों की मालाएँ तथा रत्नजड़ित कंठाभूषण तत्कालीन कला और शिल्पकौशल की उन्नति को दर्शाते हैं। हार केवल आभूषण नहीं थे, बल्कि वे व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, सांस्कृतिक पहचान तथा आर्थिक समृद्धि के भी प्रतीक थे।[3]

**बाजूबंद:** बाजूबंद प्राचीन भारतीय समाज में शक्ति, साहस, गौरव और सम्मान का प्रतीक माना जाता था। यह बाजुओं पर धारण किया जाने वाला एक महत्वपूर्ण आभूषण था, जिसका उपयोग विशेष रूप से राजाओं, योद्धाओं तथा क्षत्रिय वर्ग के लोगों द्वारा किया जाता था। बाजूबंद स्वर्ण, रजत तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित होते थे और उन पर अत्यंत सुंदर नक्काशी की जाती थी।

महिलाएँ भी विशेष अवसरों पर बाजूबंद धारण करती थीं। विवाह, धार्मिक अनुष्ठान, उत्सव तथा राजकीय समारोहों में इसका विशेष महत्व था। संस्कृत साहित्य तथा पुराणों में महिलाओं के बाजूबंदों का उल्लेख मिलता है। भारतीय मूर्तिकला में देवी-देवताओं, राजाओं और रानियों को बाजूबंद पहने हुए दर्शाया गया है, जिससे इसकी लोकप्रियता का अनुमान लगाया जा सकता है।

मौर्य, शुंग और गुप्त काल की मूर्तियों में अंकित बाजूबंद तत्कालीन शिल्पकला की उत्कृष्टता के परिचायक हैं। बाजूबंद केवल सौंदर्य-वर्धन का साधन नहीं था, बल्कि यह वीरता, सम्मान तथा उच्च सामाजिक स्थिति का भी प्रतीक माना जाता था।

**कंगन एवं चूड़ियाँ:** कंगन एवं चूड़ियाँ प्राचीन भारतीय महिलाओं के सबसे लोकप्रिय और व्यापक रूप से प्रचलित आभूषणों में से थीं। सिंधु घाटी सभ्यता की खुदाइयों से प्राप्त चूड़ियों और कंगनों के अवशेष इस बात का प्रमाण हैं कि भारतीय समाज में इनका प्रयोग अत्यंत प्राचीन काल से होता आ रहा है। मोहनजोदड़ो से प्राप्त प्रसिद्ध कांस्य नर्तकी की प्रतिमा के हाथों में अनेक चूड़ियाँ दिखाई देती हैं, जो उनकी लोकप्रियता को स्पष्ट करती हैं।

प्राचीन काल में चूड़ियाँ शंख, हाथीदांत, मिट्टी, तांबा, कांसा, कांच, चांदी और सोने जैसी विभिन्न सामग्रियों से निर्मित की जाती थीं। समाज के विभिन्न वर्ग अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार इनका उपयोग करते थे। धनी वर्ग स्वर्ण एवं रजत निर्मित कंगनों का प्रयोग करता था, जबकि सामान्य वर्ग मिट्टी, शंख और धातु से बनी चूड़ियों का उपयोग करता था।

भारतीय संस्कृति में चूड़ियों का विशेष धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व रहा है। विवाहित महिलाओं के लिए चूड़ियाँ सौभाग्य, समृद्धि तथा वैवाहिक जीवन की प्रतीक मानी जाती थीं। विभिन्न क्षेत्रों में चूड़ियों की शैली और स्वरूप में भिन्नता देखने को मिलती थी, जो स्थानीय संस्कृति और परंपराओं को प्रतिबिंबित करती थी। इस प्रकार कंगन और चूड़ियाँ केवल श्रृंगार की वस्तुएँ नहीं थीं, बल्कि सामाजिक और सांस्कृतिक जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा थीं।[4]

**करधनी (मेखला):** करधनी, जिसे प्राचीन साहित्य में 'मेखला' भी कहा गया है, महिलाओं द्वारा कमर में धारण किया जाने वाला एक अत्यंत महत्वपूर्ण अलंकार था। यह स्त्री-सौंदर्य, सम्पन्नता, शिष्टता तथा सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाता था। करधनी मुख्यतः स्वर्ण, रजत, मोती तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित की जाती थी और उसकी बनावट अत्यंत आकर्षक तथा कलात्मक होती थी।

राजपरिवारों, अभिजात वर्ग की महिलाओं तथा नृत्यांगनाओं में करधनी विशेष रूप से लोकप्रिय थी। संस्कृत साहित्य, महाकाव्यों तथा पुराणों में करधनी का अनेक बार उल्लेख मिलता है। भरहुत, सांची, अमरावती तथा अजंता की मूर्तियों में महिलाओं को करधनी धारण किए हुए दर्शाया गया है, जिससे इसकी व्यापक लोकप्रियता का प्रमाण मिलता है।

करधनी केवल श्रृंगार का साधन नहीं थी, बल्कि यह सामाजिक प्रतिष्ठा और आर्थिक समृद्धि का भी परिचायक थी। विवाह समारोहों, धार्मिक अनुष्ठानों तथा विशेष उत्सवों में महिलाएँ करधनी धारण करती थीं। नृत्य परंपराओं में भी इसका विशेष महत्व था, क्योंकि इसके साथ लगी छोटी-छोटी घंटियाँ मधुर ध्वनि उत्पन्न करती थीं, जो नृत्य की लय और सौंदर्य को और अधिक आकर्षक बनाती थीं। करधनी प्राचीन भारतीय आभूषण कला और शिल्पकौशल का एक उत्कृष्ट उदाहरण है।

**नूपुर (पायल):** नूपुर अथवा पायल प्राचीन भारतीय महिलाओं के श्रृंगार का एक अत्यंत महत्वपूर्ण और लोकप्रिय अलंकार था। पैरों में धारण किए जाने वाले इस आभूषण का उल्लेख वैदिक साहित्य, रामायण, महाभारत, संस्कृत काव्यों तथा विभिन्न पुराणों में प्राप्त होता है। सामान्यतः नूपुर चांदी से निर्मित होते थे, किंतु राजपरिवारों और अभिजात वर्ग की महिलाओं द्वारा स्वर्ण तथा रत्नजड़ित नूपुर भी धारण किए जाते थे। नूपुरों में छोटी-छोटी घंटियाँ लगी होती थीं, जिनकी मधुर ध्वनि को शुभ, मंगलकारी तथा सौभाग्य का प्रतीक माना जाता था।

प्राचीन भारतीय समाज में नूपुर केवल सौंदर्य-वर्धन का साधन नहीं था, बल्कि यह सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व भी रखता था। विवाह, उत्सव, धार्मिक अनुष्ठान तथा अन्य मांगलिक अवसरों पर महिलाओं द्वारा पायल धारण करना शुभ माना जाता था। भारतीय नृत्य परंपराओं में भी नूपुर का विशेष स्थान था। भरतनाट्यम, कथक, कुचिपुड़ी और ओडिसी जैसी नृत्य शैलियों में पैरों की लय और ताल को स्पष्ट करने में नूपुर महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे।

अजंता, एलोरा, भरहुत तथा सांची की मूर्तियों में महिलाओं को नूपुर पहने हुए दर्शाया गया है। इससे स्पष्ट होता है कि यह अलंकार तत्कालीन समाज में व्यापक रूप से प्रचलित था। नूपुर भारतीय स्त्री-सौंदर्य, कोमलता तथा सांस्कृतिक गरिमा का महत्वपूर्ण प्रतीक माना जाता था।[5]

**अंगूठी एवं मुद्रिका:** अंगूठियाँ और मुद्रिकाएँ प्राचीन भारतीय समाज में प्रतिष्ठा, अधिकार तथा सामाजिक स्थिति के महत्वपूर्ण प्रतीक थीं। इन्हें स्वर्ण, रजत, कांस्य तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित किया जाता था। सामान्य लोग साधारण अंगूठियों का उपयोग करते थे, जबकि राजाओं, सामंतों तथा उच्च अधिकारियों द्वारा विशेष प्रकार की रत्नजड़ित मुद्रिकाएँ धारण की जाती थीं।

मुद्रिकाओं का महत्व केवल आभूषण के रूप में ही नहीं था, बल्कि उनका प्रशासनिक और राजकीय उपयोग भी किया जाता था। राजाओं द्वारा जारी आदेशों, पत्रों तथा महत्वपूर्ण दस्तावेजों को प्रमाणित करने के लिए विशेष राजमुद्राओं का प्रयोग किया जाता था। इन मुद्रिकाओं पर राजवंश का चिह्न, धार्मिक प्रतीक अथवा शासक का नाम अंकित होता था।

रामायण में भगवान राम द्वारा हनुमान को दी गई मुद्रिका का उल्लेख अत्यंत प्रसिद्ध है। यह घटना मुद्रिकाओं के सामाजिक और राजनीतिक महत्व को दर्शाती है। प्राचीन भारतीय समाज में अंगूठियाँ वैवाहिक संबंधों, सम्मान तथा व्यक्तिगत पहचान का भी प्रतीक मानी जाती थीं।

**मुकुट एवं सिराभूषण:** मुकुट तथा विभिन्न प्रकार के सिराभूषण प्राचीन भारतीय समाज में सत्ता, गौरव, वैभव और दिव्यता के प्रतीक माने जाते थे। राजाओं, रानियों, राजकुमारों, धार्मिक नेताओं तथा देव-प्रतिमाओं के लिए मुकुट का विशेष महत्व था। स्वर्ण, रजत, मोती, मणि तथा बहुमूल्य रत्नों से निर्मित मुकुट राजकीय वैभव और शक्ति के प्रतीक माने जाते थे।

भारतीय मूर्तिकला और चित्रकला में विभिन्न प्रकार के मुकुटों का अत्यंत सुंदर और कलात्मक चित्रण मिलता है। विष्णु, शिव, लक्ष्मी, सरस्वती तथा अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों में भव्य मुकुटों का अंकन उनकी दिव्यता और आध्यात्मिक शक्ति का प्रतीक माना गया है। गुप्तकालीन कला में मुकुटों की भव्यता विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

राजाओं के लिए मुकुट केवल श्रृंगार का साधन नहीं था, बल्कि यह उनके अधिकार, संप्रभुता तथा राजनीतिक शक्ति का प्रतीक था। राज्याभिषेक समारोहों में मुकुट धारण करना राजसत्ता की वैधानिक स्वीकृति का महत्वपूर्ण अंग माना जाता था। इस प्रकार मुकुट प्राचीन भारतीय राजनीतिक और सांस्कृतिक जीवन का एक महत्वपूर्ण प्रतीक था।

**अलंकारों का सामाजिक एवं सांस्कृतिक महत्व:** प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का महत्व केवल शारीरिक सौंदर्य को बढ़ाने तक सीमित नहीं था, बल्कि वे सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक जीवन के महत्वपूर्ण अंग थे। अलंकार व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, आर्थिक सम्पन्नता, पारिवारिक प्रतिष्ठा तथा सांस्कृतिक पहचान के प्रमुख संकेतक माने जाते थे। समाज में किसी व्यक्ति की प्रतिष्ठा और वर्ग-स्थिति का अनुमान उसके द्वारा धारण किए गए आभूषणों से लगाया जाता था। राजपरिवारों, सामंतों तथा उच्च वर्ग के लोगों द्वारा स्वर्ण, रजत और बहुमूल्य रत्नों से निर्मित अलंकार धारण किए जाते थे, जबकि सामान्य वर्ग अपनी आर्थिक क्षमता के अनुसार अन्य धातुओं अथवा स्थानीय सामग्रियों से निर्मित आभूषणों का उपयोग करता था।

प्राचीन भारतीय जीवन में विवाह, यज्ञ, धार्मिक अनुष्ठान, उत्सव तथा अन्य सामाजिक अवसरों पर विशेष प्रकार के अलंकारों का प्रयोग किया जाता था। महिलाओं के लिए आभूषण केवल श्रृंगार की वस्तु नहीं थे, बल्कि वे सौभाग्य, सम्मान, वैवाहिक स्थिति और पारिवारिक गौरव के प्रतीक भी थे। विवाहित महिलाओं द्वारा चूड़ियाँ, करधनी, नूपुर तथा अन्य आभूषण धारण करना शुभ माना जाता था।

पुरुषों के लिए भी अलंकारों का विशेष महत्व था। राजा, योद्धा तथा उच्च पदाधिकारी मुकुट, बाजूबंद, हार और मुद्रिकाएँ धारण करते थे, जो उनके अधिकार, शक्ति और प्रतिष्ठा के प्रतीक माने जाते थे। इस प्रकार अलंकार सामाजिक संरचना और वर्गीय विभाजन को भी अभिव्यक्त करते थे।

**प्राचीन भारतीय कला में अलंकारों का चित्रण:**

प्राचीन भारतीय कला में अलंकारों का अत्यंत सुंदर और विस्तृत चित्रण मिलता है। भारतीय मूर्तिकला, चित्रकला तथा स्थापत्य कला के विभिन्न उदाहरणों में तत्कालीन समाज में प्रचलित आभूषणों और अलंकरण परंपराओं का स्पष्ट विवरण दिखाई देता है। सांची स्तूप, भरहुत स्तूप, अमरावती, मथुरा, अजंता और एलोरा की कलाकृतियाँ इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इन स्थलों पर निर्मित मूर्तियों और चित्रों में स्त्री एवं पुरुषों को विविध प्रकार के हार, कुंडल, बाजूबंद, करधनी, मुकुट तथा अन्य अलंकारों से सुसज्जित दिखाया गया है।

अजंता की भित्तिचित्रों में राजपरिवारों, देवताओं तथा सामान्य जनजीवन का जो चित्रण मिलता है, उसमें आभूषणों की कलात्मकता विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गुप्तकाल को भारतीय कला का स्वर्णयुग कहा जाता है। इस काल की मूर्तियों में अलंकारों की कलात्मकता और परिष्कृत रूप अपने चरम पर दिखाई देता है। देवी-देवताओं, राजाओं और अभिजात वर्ग की मूर्तियों में विभिन्न प्रकार के रत्नजड़ित आभूषणों का चित्रण मिलता है, जो तत्कालीन शिल्पकारों की असाधारण प्रतिभा को दर्शाता है।

**निष्कर्ष:**

प्राचीन भारतीय समाज में अलंकारों का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण और बहुआयामी था। वे केवल श्रृंगार की वस्तुएँ नहीं थे, बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा, आर्थिक सम्पन्नता, धार्मिक आस्था, सांस्कृतिक पहचान तथा राजनीतिक शक्ति के प्रतीक भी थे। विभिन्न प्रकार के आभूषणों के माध्यम से भारतीय समाज की कलात्मक प्रतिभा, शिल्पकौशल तथा सांस्कृतिक समृद्धि का परिचय प्राप्त होता है। सिंधु घाटी सभ्यता से लेकर गुप्तकाल तक अलंकारों की परंपरा निरंतर विकसित होती रही और भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बनी रही।

अलंकारों ने न केवल व्यक्ति के सौंदर्य को निखारा, बल्कि सामाजिक संरचना, धार्मिक मान्यताओं तथा सांस्कृतिक मूल्यों को भी अभिव्यक्त किया। प्राचीन भारतीय कला, साहित्य और पुरातात्त्विक साक्ष्यों में वर्णित आभूषण तत्कालीन समाज की समृद्धि और सौंदर्यबोध के महत्वपूर्ण प्रमाण हैं। आज भी भारतीय समाज में अनेक पारंपरिक आभूषण प्रचलित हैं, जो हमारी सांस्कृतिक विरासत की निरंतरता को दर्शाते हैं। इस प्रकार प्राचीन भारतीय अलंकारों की परंपरा भारतीय सभ्यता की गौरवशाली सांस्कृतिक धरोहर के रूप में सदैव स्मरणीय रहेगी।

**संदर्भ ग्रंथ सूची :**

1. वासुदेव शरण अग्रवाल, *भारतीय कला*, चौखंबा विद्याभवन, वाराणसी, 2012, पृ. 85-90, 236-240।
2. ए.एल. बाशम, *अद्भुत भारत (The Wonder That Was India)*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ. 178-182।
3. रोमिला थापर, *प्राचीन भारत का इतिहास*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2013, पृ. 214-220।

4. आर.एस. शर्मा, *प्राचीन भारत में सामाजिक संरचना*, ओरिएंट ब्लैकस्वान, नई दिल्ली, 2015, पृ. 168-172।
5. के.एम. मुंशी, *भारतीय संस्कृति का इतिहास*, भारतीय विद्या भवन, मुंबई, 2011, पृ. 154-160
6. राधाकुमुद मुखर्जी, *हिन्दू सभ्यता*, राजपाल एण्ड सन्स, नई दिल्ली, 2010, पृ. 120-128।